अध्यात्म ज्ञान एवं चिन्तन संस्था

(SOCIETY FOR ADHYATMA STUDIES)

17, सिविल लाइन्स, कमिश्नर ऑफिस के सामने, मुरादाबाद – 244001
मो0 9412241221

ब्रह्म ज्ञान विचार गोष्ठी – 47

12.02.2012

"श्रीमद् भगवद् गीता"

सप्तम् अध्याय

"ज्ञान विज्ञान योग"

निवेदक

डॉ0 यू0 के0 शाह
शाह नर्सिंग होम,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9359716440

रविन्द्र नाथ कत्याल
अमर बसेरा,
सिविल लाइन्स, मुरादाबाद
फोन नं0 9837041945

सुधीर गुप्ता, एडवोकेट
17, सिविल लाइन्स,
मुरादाबाद
फोन नं0 9412241221

श्रीमद् भगवद् गीता
अध्याय – 7
"ज्ञान विज्ञान योग"

श्रीभगवान उवाच –

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युन्जन् मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु।। 1।।

श्रीभगवान ने कहा–
हे पार्थ! मन को मुझमें लगाकर, मेरे आश्रित होकर योग का अभ्यास करते हुये सम्पूर्ण रुप से संशय रहित होकर तुम मुझे किस प्रकार जान सकोगे वह सुनो।

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्यामि अशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयः अन्यत् ज्ञातव्यम् अवशिष्यते।। 2।।

मै तुम्हे इस ज्ञान और विज्ञान को सम्पूर्णता के साथ बताऊंगा जिसको जानकर यहां फिर और कुछ भी जानने योग्य शेष नहीं रह जाता।

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चित् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः।। 3।।

हजारो मनुष्यों में कोई एक ही मुझे प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करता है और उन प्रयत्न करने वाले योगियों में भी कोई एक ही मुझे यथार्थ रुप से जानता है।

भूमिः आपः अनलः वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिः अष्टधा।। 4।।

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार ये आठ प्रकार से भिन्न–भिन्न मेरी प्रकृति है।

अपरा इयम् इतस्तु अन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्।। 5।।

यह आठ प्रकार की तो मेरी जड़ प्रकृति है और दूसरी मेरी जीव रुप चेतन प्रकृति जानो जो सम्पूर्ण जगत को धारण करती है।

एतद् योनीनि भूतानि सर्वाणि इति उपधारय।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा।। 6।।

ऐसा समझो कि सम्पूर्ण भूत इन दोनो प्रकृतियों से ही उत्पन्न होते हैं और मै सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति तथा प्रलय का करने वाला हूं।

मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनंजय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इवं।। 7।।

हे धनन्जय! मेरे अतिरिक्त किंचित मात्र भी दूसरी वस्तु नही है। यह सम्पूर्ण जगत मुझमें उसी प्रकार गुंथा हुआ है जैसे धागे में मणियां।

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु।। 8।।

हे अर्जुन! जल में मै रस हूं, चन्द्रमा और सूर्य में प्रकाश हूं, सम्पूर्ण वेदों में ओमकार हूं, आकाश में शब्द हूं और पुरुषों में पुरुषत्व हूं।

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु।। 9।।

पृथ्वी में पवित्र गंध और अग्नि में तेज मै हूं, सम्पूर्ण भूतों में जीवन मै हूं और तपस्वियों में तप भी मै हूं।

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्।। 10।।

हे अर्जुन! तुम सम्पूर्ण भूतों का सनातन बीज मुझे ही जानो। मै ही बुद्धिमानों की बुद्धि और तेजस्वियों का तेज हूं।

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ।। 11।।

हे भरत श्रेष्ठ! मै बलवानो का आसक्ति और कामनाओं से रहित बल हूं और सब भूतों में धर्म के अनुकूल कामना भी मै हूं।

ये चैव सात्त्विका भावा राजसाः तामसाः च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि।। 12।।

और जो सत्वगुण से, रजोगुण से और तमोगुण से उत्पन्न होने वाले समस्त भाव हैं वे मुझसे ही उत्पन्न होते हैं परन्तु मै उनमें और वे मुझमें नही हैं।

त्रिभिः गुणमयैः भावैः एभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परम् अव्ययम्।। 13।।

सत्, रज, तम् आदि तीन गुणों से सम्बन्धित तीन प्रकार के भावों से यह संसार मोहित हो रहा है। इसलिये इन तीन गुणों से परे मुझ अविनाशी तत्व को नहीं जान पाता।

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।। 14।।

इस अलौकिक, अति अद्भुत, त्रिगुणमयी मेरी माया से पार पाना बहुत कठिन है, परन्तु जो मुझको निरन्तर भजते हैं वे इस माया से पार होकर संसार से तर जाते हैं।

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
मायया अपहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः।। 15।।

दुष्कृत्य करने वाले, मूढ़, नराधम् व्यक्ति मुझे नही भजते हैं। माया ने जिनका ज्ञान हरण कर लिया है वे आसुरी भाव के आश्रय में रहते हैं।

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्त्तो जिज्ञासुः अर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।। 16।।

हे भरत वंशियों मे श्रेष्ठ अर्जुन! चार प्रकार के व्यक्ति मुझे भजते हैं – अच्छे कर्म करने वाले, धन को चाहने वाले, दुखी व्यक्ति और ईश्वर को जानने की इच्छा रखने वाले।

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिः विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनः अत्यर्थम् अहं स च मम प्रियः।। 17।।

इनमें से भी वह ज्ञानी अति उत्तम है जो मुझमें नित्य युक्त है, अनन्य भक्ति वाला है, वही अति उत्तम है क्योंकि मुझे तत्व से जानने वाले ज्ञानी को मै अत्यन्त प्रिय हूं और वह मुझे प्रिय है।

उदाराः सर्व एव एते ज्ञानी तु आत्मैव मे मतम्।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेव अनुत्तमां गतिम्।। 18।।

यह चारो ही मेरे लिये समय लगाते हैं इसलिये उत्तम हैं परन्तु ज्ञानी तो साक्षात मेरा ही स्वरुप है क्योंकि वह स्थिर बुद्धि होकर अति उत्तम रुप से मुझमें ही स्थित होता है।

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।। 19।।

बहुत जन्मों तक निरन्तर प्रयत्न करते हुये तत्व ज्ञान को प्राप्त करने वाला ज्ञानी यह जानकर कि 'सब कुछ वासुदेव ही है' मुझे भजता है, ऐसा महात्मा अति दुर्लभ है।

कामैः तैस्तैः हृतज्ञानाः प्रपद्यन्ते अन्यदेवताः।
तं तं नियमम् आस्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया।। 20।।

ज्ञान से भ्रष्ट हुये तथा विषयों में आसक्त हुये व्यक्ति अपने स्वभाव से प्रेरित होकर कामनाओं की पूर्ति के लिये अन्य देवताओं की नियमानुसार पूजा करते हैं।

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धया अर्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्।। 21।।

जो–जो कामनापूर्ण भक्त जिस–जिस देवता के स्वरुप को श्रद्धा से पूजना चाहता है उस–उस भक्त की मै उसी देवता के माध्यम से श्रद्धा को पूरा करता हूं और मै इच्छित फल देकर उनकी श्रद्धा को बढ़ाता हूं।

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्य आराधनम् इहते।
लभते च ततः कामान् मयैव विहितान्हि तान्।। 22।।

वह भक्त श्रद्धा से युक्त होकर अपने इच्छित देवता की पूजा करता है और उस देवता से मेरे द्वारा ही विधान किये हुये इच्छित भोगों को निःसन्देह प्राप्त करता है।

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवति अल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि।। 23।।

परन्तु उन अल्प बुद्धि वालों का वह फल नाश होने वाला है। उन देवताओं को पूजने वाले उन्ही देवताओं को प्राप्त करते हैं और मेरे भक्त मुझको ही प्राप्त करते हैं।

अव्यक्तं व्यक्तिम् आपन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावम् अजानन्तो ममाव्ययम् अनुत्तमम्।। 24।।

बुद्धिहीन व्यक्ति मुझ अव्यक्त (मन व इन्द्रियों से परे) को व्यक्तिभाव युक्त मानते हैं वे मेरे सर्वोत्तम, अविनाशी, परम भाव को नहीं पहचान पाते हैं।

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमाया समावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोकोमाम् अजम् अव्ययम्।। 25।।

मै अपनी योग माया से छिपा हुआ हूं और सबको प्रत्यक्ष नही होता हूं, इसलिये यह अज्ञानी मनुष्य मुझ जन्मरहित, अविनाशी परमात्मा को नहीं पहचान पाता है।

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन।। 26।।

हे अर्जुन! पूर्व में बीते हुये और वर्तमान में स्थित तथा भविष्य में आने वाले सब भूतों को मै जानता हूं परन्तु मुझको कोई भी नहीं जानता है।

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि संमोहं सर्गे यान्ति परंतप।। 27।।

हे भरतवंशी अर्जुन! संसार में इच्छा और द्वेष से उत्पन्न हुये सुख–दुख आदि द्वन्दों के मोह से सम्पूर्ण प्राणी सम्मोहित हो रहे हैं।

येषां तु अन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः।। 28।।

परन्तु ऐसे मनुष्य जो निष्काम भाव से श्रेष्ठ कर्मों का आचरण करने वाले हैं और जिनका पाप नष्ट हो गया है वे दृढ़ निश्चय के कारण राग–द्वेष आदि द्वन्दों के मोह से मुक्त होकर मुझे प्राप्त करते हैं।

जरामरणमोक्षाय माम् आश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नम् अध्यात्मं कर्म चाखिलम्।। 29।।

जो मनुष्य मेरी शरण में आकर जरा और मरण से मुक्त होने के लिये यत्न करते हैं वे सम्पूर्ण कर्म तथा सम्पूर्ण अध्यात्म और परम ब्रह्म के रहस्य को जान लेते हैं।

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुः युक्तचेतसः।। 30।।

जो मनुष्य अधिभूत, अधिदैव तथा अधियज्ञ सहित सबका आत्म रुप मुझे ही जानते हैं ऐसे युक्त चित्त वाले मनुष्य अन्त काल में भी मुझको ही जानते हैं अर्थात प्राप्त होते हैं।

अधिभूत – पांच विषय (रुप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द), पांच कर्मेन्द्रियां व पांच ज्ञानेन्द्रियां रुपी भौतिक संसार
अधिदैव – अंतःकरण (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार)
अधियज्ञ – विषयों से परे यज्ञ (अध्यात्म)

।। इति सप्तम्ध्याय।।